2 मई 2015, कुल पृष्ठ : 8, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 JaipurCity / 224 / 2015-17

जैन
पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के व्याख्यान प्रतिदिन अब आधे घंटे
जिनवाणी चैनल पर
जिनवाणी JINVANI प्रतिदिन
सुख, शान्ति, समृद्धि
प्रातः 7.00 से 7.30 बजे तक

वर्ष : 38, अंक : 3 सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** आजीवन शुल्क : 251 रुपये
मई (प्रथम), 2015 (वीर नि. संवत्-2541) सह-सम्पादक : **डॉ. संजीवकुमार गोधा व पण्डित परमात्मप्रकाश भारिल्ल** वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

देशभर में धूमधाम से मनाया गया उपकार दिवस

(1) दिल्ली : आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी की 126वीं जन्मजयंती के पावन प्रसंग पर एवं श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल दिल्ली के 50 वर्ष पूर्ण होने पर दिनांक 20 अप्रैल को श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल दिल्ली एवं अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन उस्मानपुर दिल्ली के तत्त्वावधान में स्वर्ण जयन्ती महोत्सव, उपकार दिवस एवं विज्ञान वाटिका पुरस्कार वितरण समारोह सानन्द संपन्न हुआ।

इस अवसर पर अन्तरराष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल, ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना, पण्डित धनसिंहजी ज्ञायक पिड़ावा, पण्डित संजयजी शास्त्री मंगलायतन, पण्डित विरागजी शास्त्री जबलपुर एवं अनेक स्थानीय विद्वानों का समागम प्राप्त हुआ।

कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री अजितप्रसादजी दिल्ली ने की एवं मुख्य अतिथि श्री सत्येन्द्र जैन (वित्त एवं स्वास्थ्य मंत्री, दिल्ली) थे। इस कार्यक्रम में श्री त्रिलोकचंदजी जैन, श्री जयपालजी एवं श्री नरेशजी का सम्मान किया गया। अखिल भारतीय स्तर पर आयोजित विज्ञान वाटिका प्रतियोगिता में 108 प्रतियोगियों को 108 विशेष पुरस्कारों से एवं सभी प्रतियोगियों को एक-एक किट भेंट में देकर सम्मानित किया गया। इसी श्रंखला में देशभर में तत्त्वार्थसूत्र कण्ठस्थ करने वाले सभी महानुभावों का सम्मान किया गया।

इस अवसर पर लगभग 1500 साधर्मियों ने प्रवचन, भक्ति एवं कवि सम्मेलन जैसे कार्यक्रमों का भरपूर लाभ लिया।

कार्यक्रम का संचालन पण्डित संदीपजी शास्त्री एवं संयोजन पण्डित ऋषभजी शास्त्री ने किया।

(2) मंगलायतन (उ.प्र.) : आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी की 126वीं जन्मजयंती के उपलक्ष्य में दिनांक 17 से 21 अप्रैल तक आयोजित पंच दिवसीय उपकार समर्पण समारोह सानन्द संपन्न हुआ।

इस अवसर पर गुरुदेवश्री के वीडियो सी.डी. प्रवचनों के अतिरिक्त तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जबलपुर, पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी आगरा, पण्डित कमलकुमारजी पिड़ावा, पण्डित देवेन्द्रकुमारजी जैन मंगलायतन, डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर, डॉ. योगेशजी जैन अलीगंज, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा,पण्डित संजयजी शास्त्री मंगलायतन, पण्डित संजीव जैन दिल्ली आदि अनेक विद्वानों के प्रवचनों व गोष्ठियों के माध्यम से लाभ प्राप्त हुआ। बालकक्षा पण्डित बाबूभाई मेहता फतेहपुर द्वारा चलाई गई।

कार्यक्रम का शुभारंभ जिनेन्द्र शोभायात्रा से हुआ। तत्पश्चात् ध्वजारोहण श्री निहालचंद्रजी जैन जयपुर द्वारा हुआ।

इस अवसर पर रत्नत्रय मंडल विधान का उद्घाटन श्री महाचन्दजी जैन भीलवाड़ा ने किया। विधि-विधान के समस्त कार्य पण्डित संजयजी शास्त्री मंगलायतन व मंगलार्थी छात्रों द्वारा संपन्न हुये।

समारोह में कारंजा, नागपुर, चैतन्यधाम, बांसवाड़ा, खनियांधाना, सोनागिर, मंगलायतन आदि विद्यालयों के छात्रों एवं बालिका संस्कार संस्थान उदयपुर की छात्राओं द्वारा कण्ठपाठ प्रतियोगिता, जिनवाणी सज्जा प्रतियोगिता तथा गुरुदेवश्री के जीवन पर प्रभावी नाट्य कार्यक्रम का आयोजन किया गया, जिसे सभी लोगों ने पसन्द किया।

(3) चैतन्यधाम-अहमदाबाद (गुज.) : यहाँ आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी की 126वीं जन्मजयंती दिनांक 19 अप्रैल को उपकार दिवस के रूप में मनाई गई।

इस अवसर पर गुरुदेवश्री के सी.डी. प्रवचन के अतिरिक्त पण्डित शैलेषभाई तलोद का विशेष व्याख्यान हुआ।

कार्यक्रम में मुमुक्षु मण्डल मलाड-मुम्बई द्वारा गुरुदेवश्री के जीवन पर आधारित विशेष नाटिका प्रस्तुत की गई। देशभर से लगभग 2500 साधर्मियों ने कार्यक्रम का लाभ लिया।

कार्यक्रम का संचालन पण्डित सचिनजी शास्त्री ने किया।

अध्यात्म मनीषियों का विशेष सम्मान

मंगलायतन (उ.प्र.) : यहाँ उपकार दिवस के अवसर पर आध्यात्मिक सत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी द्वारा उद्घाटित तत्त्वज्ञान को गतिशील बनाये रखने में जिन अध्यात्म मनीषियों का विशेष योगदान रहा, उन्हें दिनांक 18 अप्रैल को सम्मानित किया गया।

इस अवसर पर श्री सत्येन्द्र जैन (गृह, विद्युत, स्वास्थ्य, उद्योग एवं सार्वजनिक निर्माण मंत्री-दिल्ली सरकार) विशेष रूप से उपस्थित रहे।

समारोह में स्व. पण्डित कैलाशचंदजी जैन/मुकेशजी जैन, बाबू युगलजी कोटा (परोक्ष सम्मान), डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल जयपुर, पण्डित विमलचंदजी झांझरी उज्जैन, स्व. पण्डित धन्यकुमारजी भोरे/ भरत जैन भोरे, पण्डित ज्ञानचन्दजी विदिशा/प्रमोद जैन, पण्डित बाबूभाई मेहता फतेपुर, पण्डित देवेन्द्रकुमारजी जैन बिजौलिया आदि विद्वानों का सम्मान किया गया।

सम्पादकीय -

ज्ञान-विज्ञान की मैत्रीपूर्ण सरस वार्ता

– पण्डित रतनचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे...)

व्यवसाय में परिवर्तन करके वह पलायनवादी प्रवृत्ति को प्रोत्साहन नहीं देना चाहता था। उसका सोचना था कि रणछोड़दास बनने के बजाय न्याय-नीति से रण करना ठीक है।

अन्तर-बाह्य व्यक्तित्व का धनी सुदर्शन देखने में सुदर्शन तो था ही; सत्यप्रिय, सदाचारी और धर्मप्रेमी भी था।

वकालत का व्यवसाय होने पर भी सत्य के प्रति इतनी निष्ठा अपने आप में असाधारण बात है। कोई कितनी भी फीस का प्रलोभन क्यों न दे ? पर वह झूठे मुकदमे कभी स्वीकार नहीं करता, फिर भी उसके पास इतने मुकदमे आते हैं कि वह अस्वीकार करते-करते हैरान हो जाता है।

जिसे सच्चा न्याय दिलाने से ही फुरसत नहीं मिलती हो, वह झूठे मुकदमे ले ही क्यों ? सच को झूठ और झूठ को सच करने में अपनी शक्ति का अपव्यय और वादी-प्रतिवादी के पैसों का अपव्यय करने में उसका विश्वास नहीं था।

वह महत्वपूर्ण मामले ही लेता था। बहुत से छोटे-मोटे झगड़े तो वह दोनों पक्षों को बुलाकर उन्हें मुकदमों से होने वाली हानियाँ और परेशानियाँ समझाकर परस्पर समझौतावार्ता से स्वयं ही निबटा देता था। कभी किसी को गलत सलाह नहीं देता। बिना कारण किसी को उलझन में नहीं डालता। इस कारण भी उसकी लोकप्रियता में चार-चाँद लग गये थे।

रविवार का दिन था, सुदर्शन मन्दिर से सामूहिक पूजन का कार्यक्रम समाप्त करके प्रात: 9.30 बजे घर लौटा ही था कि ज्ञान और विज्ञान सुदर्शन के घर जा पहुँचे। सुदर्शन ने दूर से ही उन्हें देखकर चार कदम आगे बढ़कर स्वागत करते हुये कहा -''आओ, भाई ज्ञान आओ !'' फिर विज्ञान की ओर दृष्टि घुमाते हुये सुदर्शन ने कहा -''ओ हो ! विज्ञान ! नमस्ते मि.विज्ञान ! तुम तो बहुत दिनों बाद दिख रहे हो ? किस दुनिया में रहते हो आजकल ?''

''हाँ, आप ठीक कह रहे हो; पर बात यों हुई कि पिताश्री की अस्वस्थता के कारण मैंने ग्रेजुएशन करके पढाई तो छोड़ दी, पर घर आते ही कारोबार संभालने में कुछ ज्यादा ही व्यस्त हो गया, इस कारण इन दिनों कहीं आना-जाना नहीं हुआ, अब थोड़ी फुरसत मिलने लगी तो मैंने सोचा - चलो अपनी पुरानी मित्र-मंडली से भी मिल लूँ। इच्छा तो बहुत दिनों से थी पर.....''

विज्ञान की बात पूरी हुई ही नहीं थी कि ज्ञान हंसी के मूड में आते हुए सुदर्शन से बोला -''मित्र ! तू भी किस नास्तिक से नमस्ते कर बैठा !''

सुदर्शन ने कहा - ''क्यों ऐसी क्या बात है ? विज्ञान और नास्तिक ?''

''हाँ, पूरा नास्तिक है, न आत्मा में विश्वास, न परमात्मा में, न खान-पान का विवेक, न दिन-रात का विचार, जब जो जी में आये खाओ-पीओ और सुख से जिओ - ये हैं इसके विचार। विश्वास न हो तो तुम ही पूछ लो'' - ज्ञान ने कहा।

सुदर्शन बोला -''क्यों भाई विज्ञान! यह ज्ञान क्या कह रहा है?''

''वैसे तो लगभग ठीक ही कह रहा है, पर मुझे इस सम्बन्ध में तुमसे और ज्ञान से भी बहुत कुछ बातें करनी हैं।''-विज्ञान ने कहा।

ज्ञान ने कहा - ''देखो ! मैंने कहा था न ? कि अभी यह नमस्ते तो क्या आशीर्वाद का भी पात्र नहीं है। अभी तो इसे पहले ज्ञानगंगा में गहरी डुबकियाँ लगवाकर स्नान कराना पड़ेगा, तब कहीं यह अपने साथ उठने-बैठने लायक होगा। यह इंगलिश स्कूल में जाकर तो बिलकुल ही नास्तिक हो गया है। नमस्ते तो जयजिनेन्द्र से भी ऊँचा अभिवादन है।'' 'वीतरागाय नम:', 'महावीराय नम:' की तरह ही 'ते नम:' शब्द से नमस्ते बना है, जिसका अर्थ पूज्य पुरुषों को नमन करना होता है। समझे ?

विज्ञान ने कहा -''प्रोफेसर साहब समझायें और हमारी समझ में न आये - ऐसा कैसे हो सकता है ? समझाओ, समझाओ; और क्या समझाना है। तुम तो सब लोग मिलकर मुझे चाय-पानी की जगह उपदेश ही उपदेश पिलाओ। दार्शनिक जो ठहरे।

''अरे मित्र ! बातों बातों में, मैं पानी पिलाना और चाय, कॉफी की पूछना तो भूल ही गया। क्षमा करना मित्र !''- कहते हुए सुदर्शन ने नौकर को आवाज लगाते हुए कहा -''रामू ओ रामू ! पानी तो ला !''

खड़े होकर अपने हाथों से पानी के गिलास देते हुए सुदर्शन ने पूछा -''क्यों भाई ! और क्या चलेगा ? चाय, कॉफी या दूध ? ज्ञान तो चाय, कॉफी लेगा नहीं, यह तो दूध लेगा। पर विज्ञान ! तुम अपनी पसंद बताओ !''

ज्ञान बीच में ही बोला -''यह गरम तो बहुत हो लिया, इसे तो ठंडा करने की आवश्यकता है, यदि कोई ठंडा पेय हो तो इसे तो वही पिलाओ। क्यों विज्ञान ! मैंने ठीक कहा है न ?''

''अरे ज्ञान ! हमारा क्या, जो पिलाओगे वही पी लेंगे'' - विज्ञान ने लापरवाही से कहा ....।

सुदर्शन ने मजाक करते हुए कहा -''देखो भाई ! तुम भले ही कुछ भी पी सकते हो, पर यहाँ तो अभी आपको दूध-चाय और कॉफी ही मिल पायेगी। यद्यपि तुम मेरे मित्र ही नहीं मेहमान भी हो, अत: मुझे ऐसा नहीं कहना चाहिये पर .....।''

विज्ञान ने कहा -''अरे मित्र ! मित्रता में मेहमानी कैसी ? मित्र कभी मेहमान नहीं होता। मित्र तो सदा मित्र ही रहता है। मित्र के आगे मेहमान का मूल्य ही क्या ? तुम मुझे मेहमान बनाकर अपने से

दूर मत करो। क्या तुम यह नहीं जानते कि मित्र और मेहमान में मौलिक अन्तर होता है ?''

मित्र और मेहमान की आपस में कोई तुलना ही नहीं है। एक पूर्व है तो दूसरा पश्चिम। मित्र के साथ कोई दुराब–छिपाव नहीं होता, दिलों की दूरी नहीं होता, दोनों की देह दो होती है और दिल एक।

जबकि मेहमान के साथ होता है औपचारिकताओं का पूरा पुलिंदा, उसके सामने घर की कोई कमजोरी जाहिर नहीं की जा सकती, उसके आतिथ्य–सत्कार में कोई कमी नहीं रहनी चाहिये, मन–मस्तिष्क पर ऐसा बोझ बना रहता है। भले ही तुम्हें उधार ही क्यों न लेना पड़े, पर मेहमान का स्वागत–सत्कार तो.....। जबकि मित्र के साथ ऐसी कोई चिन्ता नहीं रहती।

मेहमान भले प्यासा बैठा रहेगा, पर पानी माँगकर नहीं पियेगा और मित्र चौके में जाकर अपने हाथ से भी चाय बनाकर पी लेगा।

और सुनो ! मित्र कभी किसी बात का बुरा नहीं मानता और मेहमान यदि बात–बात में बुरा न माने तो वह मेहमान कैसा ? नाराज होना और मनवाना तो मेहमान का जन्मसिद्ध अधिकार है।

अत: तुम मुझे मित्र ही रहने दो –''मेहमान मत बनाओ, मेरा चौके में जाने का अधिकार तुम मुझसे नहीं छीन सकते।''

ज्ञान ने हँसी के मूड में आकर विज्ञान से कहा – विज्ञान ! तूने मित्र और मेहमान की कैसी सुन्दर व्याख्या की ? मैं तो तुझे विज्ञान का सामान्य विद्यार्थी समझ रहा था, पर तू तो पूरा दार्शनिक निकला। मौलिक चिन्तन में भी मुझसे दो कदम आगे निकल गया।

विज्ञान ने कहा –''खैर ! जाने दो मित्र ! प्रशंसा करके मुझे बिना बात चने के झाड़ पर क्यों चढाते हो ?

''प्रशंसा की बात तो है ही, साथ ही जो सत्य है उसे, कहे बिना भी तो नहीं रहा जा सकता।''– ज्ञान ने कहा।

बात को बदलते हुए विज्ञान बोला – मुझे अभी–अभी ज्ञान ने बताया कि तुम लोगों के खाने–पीने के भी बड़े नखरे हैं। आलू नहीं खाते, प्याज नहीं खाते, मूली आदि कोई भी जमीकंद नहीं खाते, आचार–मुरब्बा नहीं खाते, बाजार का बना हलुआ, मिठाई आदि नहीं खाते, रात में नहीं खाते और पता नहीं क्या–क्या नहीं खाते–पीते ? ऐसा क्यों? आखिर यह सब क्या नाटक है ? इसमें तुम्हारा क्या सिद्धान्त है ?

अरे ! जो जब जी में आये खाओ–पीओ और सुख से जीओ। व्रत, उपवास करके और पौष्टिक पदार्थों का त्याग करके शरीर को क्यों सुखाते हो ? आखिर ये भी कोई जीवन है ? न कोई मनोरंजन, न कोई मौज–मस्ती। धर्म के नाम पर किस पाखंडवाद के चक्कर में पड़ गये हो ? अरे ! तुम पूजा–पाठ का ढोंग रचने के बजाय जनता की सेवा करो। सेवा ही सच्चा धर्म है।''

विज्ञान बैठक में बैठा–बैठा ज्ञान से यह कह ही रहा था कि इसी बीच सुदर्शन अन्दर से बैठक में आ गया और उसने मेहमान की मर्यादा रखते हुए मित्र के नाते विज्ञान से जरा ऊँचे स्वर में कहा –''विज्ञान ! ज्ञान का सदाचारी, नैतिक और धार्मिक जीवन आखिर तुझे पाखण्ड–सा क्यों लगता है ? और यदि पत्थर पूजने में कुछ नहीं है तो तू कागज के टुकड़ों को क्यों पूजता है ?''

विज्ञान ने विस्मय भाव से कहा –''क्या कहा ? मैं कागज के टुकड़े पूजता हूँ, किसने कह दिया यह तुमसे ?''

सुदर्शन ने कहा –''कहेगा कौन? मैंने अपनी आँखों से देखा है।''

''कब'' ? विज्ञान ने फिर विस्मय भाव से पूछा।

सुदर्शन ने दृढता के साथ कहा –''कब क्या ? तू अपने दादाजी के फोटो पर नित्य नई–नई बहुमूल्य मालायें पहनाता है या नहीं ?''

विज्ञान ने कहा –''हाँ, डालता हूँ, पर इससे तुम्हें क्या लेना–देना है ? तुम्हें पता नहीं, मेरे दादाजी के मेरे ऊपर कितने उपकार हैं ? वे मुझसे कितना प्यार करते थे ? मैं आज जो भी हूँ, उनकी कृपा से हूँ। अत: उनकी मैं जितनी भी कृतज्ञता ज्ञापित करूँ, कम ही है। पर तुम पूजा–पाठ की बातचीत के बीच में मेरे दादाजी को क्यों घसीट लाये ?''

सुदर्शन ने कहा –''अरे विज्ञान ! तुम्हारे दादाजी ने तो केवल चार–पाँच वर्ष ही तुमसे प्यार किया और तुम्हारी देखभाल की तथा शिक्षाप्रद पौराणिक कथायें सुना–सुनाकर सुसंस्कार डाले। जब इतने मात्र से तुम्हारी उन पर ऐसी भक्ति और इतना प्रेम उमड़ता है कि तुम उनकी फोटो पर प्रतिदिन नियमित रूप से एक से बढकर एक चन्दन की मालायें पहनाते हो तो जिन तीर्थंकरों ने हमारे अनन्त काल के अनन्त दु:ख दूर करने का सन्मार्ग दिखाया हो, हम यदि उनकी मूर्ति बनाकर पूजा–भक्ति करते हैं, तो तुम्हें हमारा यह कार्य ढोंग–सा क्यों लगता है ?

सुदर्शन के तर्क ने विज्ञान की बोलती तो बन्द कर दी, उसे निरुत्तर तो कर दिया, पर अभी विज्ञान के हृदय को ज्ञान का पूजा–पाठ करना स्वीकृत नहीं हुआ।

अत: उसने कहा –''भाई ! तुम कुछ भी कहो, परन्तु फोटो पर माला पहनाना मुझे जैसा स्वाभाविक लगता है वैसी स्वाभाविकता पूजा–पाठ में नहीं लगती।''

सुदर्शन ने पहले तो व्यंग्य में कहा –''हाँ, ठीक है तुम्हारा खून तो खून और हमारा खून पानी। खैर, कोई बात नहीं, यह तो मन माने की बात है। तुम अपने विचारों के लिये स्वतंत्र हो। विचार स्वातंत्र्य तो मानव का जन्मसिद्ध अधिकार है।''

सुदर्शन ने अब भी अपने मन से हार नहीं मानी, अत: उसने विज्ञान का समाधान करने की भावना से पुन: कहा –''अरे भाई ! जहाँ तक स्वाभाविक और अस्वाभाविक लगने की बात है सो उसका कारण तो यह है कि जैसा प्रत्यक्ष परिचय तुम्हारा पूर्वजों से है वैसा तीर्थंकरों से नहीं। जब तुम पूर्वजों की भाँति ही तीर्थंकरों से और उनकी वाणी से भी प्रत्यक्ष परिचय प्राप्त कर लोगे तो तुम्हें उनकी पूजा–भक्ति में भी वैसी ही अनुभूति होने लगेगी।''

सुदर्शन के तर्क और युक्तियों से विज्ञान कुछ हिल तो गया, पर अभी बदला बिलकुल नहीं। **(क्रमश:)**

धर्म क्या, क्यों, कैसे और किसके लिए - *(ग्यारहवीं किश्त, गतांक से आगे)*

– परमात्मप्रकाश भारिल्ल

पिछले अंक में हमने पढा कि – ***''किस प्रकार अपने स्वरूप के अनिर्णय के कारण हम मात्र अपने परमार्थ से ही वंचित नहीं रहते हैं वरन अपने वर्तमान में भी हास्यास्पद और अविश्वसनीय स्थिति में बने रहते हैं''*** अब आगे पढिये –

अपने स्वरूप के अनिर्णय के कारण मात्र यही नुकसान नहीं है कि हमारे कथन और विचार प्रतिपल बदलते रहते हैं और हम अविश्वसनीय बने रहते हैं वरन एक सबसे बड़ा नुकसान यह भी है कि हम सब अपने क्षणस्थायी, व्यक्तिगत स्वार्थों से निरपेक्ष कोई ऐसी आदर्श व्यवस्था स्थापित करने में कामयाब नहीं हो पाते हैं जो स्थाई हो, सभी के हित में हो, सभी को स्वीकृत हो।

अब यदि मैं अपने स्वरूप का निर्णय करना भी चाहूँ, मैं कौन हूँ यह समझना भी चाहूँ, ''मैं'' को परिभाषित भी करना चाहूँ; तो क्या यह संभव है ? क्या यह आसान है ?

यदि ''मैं'' की कोई स्थायी और सुनिश्चित, सर्वमान्य परिभाषा हो तो मैं उसे स्वीकार करने को तैयार हूँ, पर मुझे तो ऐसी कोई परिभाषा दिखाई ही नहीं देती है, समझ ही नहीं आती है, तब मैं क्या करूँ ?

मेरी ''मैं'' की परिभाषा तो क्षेत्र–काल के अनुरूप बदलती ही रहती है।

यदि क्षेत्र की अपेक्षा बात करूँ तो मैं ''भारतीय'' हूँ, पर मैं सिर्फ भारतीय ही नहीं हूँ क्षेत्र की अपेक्षा ही मैं भारतीय होने के साथ–साथ राजस्थानी भी हूँ, अब मैं क्या करूँ ? अपने आपको भारतीय मानूँ या राजस्थानी ?

अब यदि मैं राजस्थान छोड़कर महाराष्ट्र में चला जाता हूँ तो राजस्थानी नहीं रहता महाराष्ट्रियन हो जाता हूँ, पर मैं हिन्दुस्तानी तब भी बना रहता हूँ।

या यूं कहिये कि राजस्थानी भी बना ही रहता हूँ क्योंकि वहाँ जन्मा हूँ और महाराष्ट्रियन और हो जाता हूँ क्योंकि वहाँ रहता हूँ तथा भारतीय तो हूँ ही।

अब मैं अपने आपको क्या मानूं ? किसके हित का संरक्षण करूँ ?

एक भारतीय के नाते मेरे लिये राजस्थान और महाराष्ट्र के हित समान हैं, पर राजस्थान और महाराष्ट्र के बीच तो आपस में हितों का टकराव है, अब यह कैसे संभव है कि हर हाल में मेरे सभी हितों की सुरक्षा हो ?

यदि यह नहीं हो सकता ***तो क्या मैं कभी भी संपूर्ण सुखी हो ही नहीं पाऊँगा ?***

यह तो रही क्षेत्र की बात, अब यदि काल की बात करें तो फिर वही दुविधा !

कल मैं बालक था आज युवा हूँ पर कल युवा भी नहीं रहूँगा, बूढा हो जाऊँगा।

तो मैं हूँ कौन ? मैं किसके हितों का विचार करूँ, किसके हितों का संरक्षण करूँ ?

जो नहीं था वह मैं हो जाता हूँ, जो मैं हूँ वह मैं रहूँगा नहीं और सभी स्थितियाँ एक दूसरे के विरुद्ध हैं, सभी के बीच हितों का टकराव है। तब मैं क्या करूँ ?

मात्र यही दो कारक भी नहीं हैं और भी ***अनेकों कारक हैं जो मैं की परिभाषा को प्रभावित करते हैं।***

कदकाठी की दृष्टि से मैं लम्बा–नाटा हो जाता हूँ तो रंगरूप की दृष्टि से गोरा–काला, डीलडौल की दृष्टि से यदि मोटा–दुबला कहलाता हूँ तो देख–दिखावे के अनुसार सुन्दर या कुरूप।

मैं कभी स्वस्थ कहलाता हूँ, कभी रुग्ण, कभी थका–हारा तो कभी तरोताजा, कभी तृप्त तो कभी भूखा–प्यासा, कोई मुझे बुद्धिमान कहता है तो कोई मूर्ख, कोई मुझे सम्पन्न कहता है कोई दरिद्री, कोई कृपण तो कोई उदार, कोई विद्वान तो कोई गंवार, कभी मैं क्रोधी कहलाता हूँ कभी शान्त, कभी भयभीत कभी निर्भय, कभी कायर कभी वीर।

आखिर मैं हूँ कौन ?

मैं जो भी हूँ, सभी लोग मुझे वैसा ही क्यों नहीं कहते और मानते हैं, फर्क सदा ही बना रहता है, मैं बदल जाता हूँ तब भी और वही रहता हूँ तब भी। एक ही व्यक्ति मुझे अलग–अलग समय में अलग–अलग नाम से पुकारता है।

समझ नहीं आता कि वे ही मूर्ख हैं या मैं ही विचित्र हूँ।

सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण प्रश्न तो यह है कि जब मैं एक हूँ तो मैं की परिभाषाएँ अलग–अलग, एक दूसरे से भिन्न और विपरीत, अनेक कैसे हो सकती हैं, मैं की परिभाषा तो एक ही रहेगी, रहनी चाहिये न !

वह मेरी परिभाषा ही क्या जो हर हाल में, हर काल में मेरी पहिचान न कराये।

वह परिभाषा ही कैसी जो कभी भी, कहीं भी बदल जाये।

क्या होना चाहिये यह एक बात है और क्या है, यह दूसरी बात।

यहाँ **जब कदम–कदम पर ''मैं'' की विभिन्न परिभाषाएँ सामने आयें और वे उपयुक्त भी लगें तब हम यह कैसे स्वीकार कर सकते हैं कि ''मैं'' की परिभाषा मात्र एक हो सकती है, अनेक नहीं हो सकतीं हैं।**

प्रत्यक्ष से कैसे इन्कार किया जा सकता है ?

क्या मैं मनुष्य नहीं हूँ, क्या मैं पुरुष नहीं हूँ, क्या मैं युवक नहीं हूँ,

क्या मैं पिता नहीं हूँ, तो क्या मैं पुत्र नहीं हूँ ? क्या मैं स्वस्थ नहीं हूँ ? क्या मैं भूखा नहीं हूँ ? क्या मैं समय–समय पर छात्र, खिलाड़ी, राहगीर, ग्राहक, क्रोधी या थका हुआ नहीं बन जाता हूँ ? क्या मैं एक साथ ''स्वस्थ पर थका हुआ, भूखा, क्रोधित, युवा, राहगीर'' नहीं हो सकता?

आखिर ''मैं पुरुष हूँ'' यह मानने से ''मैं मनुष्य हूँ'' इस सत्य पर कहाँ आँच आती है ? मैं पुरुष भी हूँ और मनुष्य भी। जितना बड़ा सत्य यह है कि ''मैं पुरुष हूँ'' ''मैं मनुष्य हूँ'' यह सत्य भी उससे किसी मायने में कम नहीं।

और तो और कल तक मैं मात्र पुत्र था पर आज पिता भी बन गया तो इससे मेरे पुत्रत्व पर कोई आंच तो नहीं आती है न ? कल तक मैं मात्र पुत्र था, आज मैं पुत्र भी हूँ और पिता भी; इस सत्य को, इस तथ्य को भला कौन झुठला सकता है ?

तो क्या मैं क्षणिक ही हूँ ? क्या मेरा कोई स्थायी स्वरूप नहीं है ?

क्या मैं बदलता ही रहता हूँ, निरंतर ?

तब भला मैं किस ''मैं'' का हितसाधन करूँ ?

अभी मैं युवा हूँ और आज मैं बुजुर्ग पीढी के साथ अपनी युवा पीढी के हितों की लड़ाई लड़ूं, पर हो न हो जब तक मैं जीत पाऊँ, युवा पीढी के हक में कुछ हासिल कर पाऊँ, मैं स्वयं ही बूढा हो जाऊँगा, तब क्या मैं जीतकर भी हार नहीं जाऊँगा ? तब तो मुझे बुजुर्गों की जीत अभीष्ट होगी।

इसप्रकार ***मैं जिस भी ''मैं'' का हित साधन करूँगा कुछ ही समय बाद मैं वही नहीं रहूँगा, तब क्या मैं अनंत दु:खी नहीं हो जाऊँगा ? तब मैं सुखी कैसे होऊँगा ?***

क्या मुझे अपनी यह नियति स्वीकार है ?

अरे ! सिर्फ बदलने की ही बात भी नहीं है, बिना बदले भी तो ***मैं एक ही साथ, एक ही समय पर दो ऐसी अलग–अलग पहिचानों का स्वामी होता हूँ जिनके हित एक दूसरे के विपरीत होते हैं, तब मैं एक साथ दोनों के हितों का संरक्षण कैसे कर पाऊँगा ?***

तो क्या मैं कभी भी सुखी होऊँगा ही नहीं ?

मैं तो हिन्दुस्तानी भी हूँ और राजस्थानी भी पर दोनों रूप में मेरे हित अलग–अलग भी हैं और एक दूसरे से विपरीत भी; तब मैं कौनसे हितों का संरक्षण करूँ ?

अगले अंक में पढिये कि क्यों मेरे उक्त नाम सत्य और सार्थक नहीं हैं, मेरे स्वरूप की सत्यता की कसौटी क्या हो सकती है और अंतत: ''मैं कौन हूँ''? (क्रमश:)

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

17 से 22 मई	पारले (मुम्बई)	पंचकल्याणक
24 मई से 10 जून	मेरठ	प्रशिक्षण–शिविर
11 जून से 15 जुलाई	विदेश	तत्त्वप्रचारार्थ

विदाई समारोह संपन्न

बांसवाड़ा (राज) : यहाँ ज्ञायक पारमार्थिक ट्रस्ट द्वारा संचालित आचार्य अकलंक देव जैन न्याय महाविद्यालय ध्रुवधाम में शास्त्री अन्तिम वर्ष के विद्यार्थियों का सप्तम दीक्षांत एवं विदाई समारोह दिनांक 9 अप्रैल को संपन्न हुआ।

इस अवसर पर डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर के मार्मिक प्रवचन का लाभ मिला।

कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री महिपालजी ज्ञायक ने की। समारोह के मुख्य अतिथि एवं कुलाधिपति डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर थे। विशिष्ट अतिथि के रूप में श्री धनपालजी, पण्डित भोगीलालजी उदयपुर, पण्डित संजयजी शास्त्री परतापुर, पण्डित प्रवीणजी शास्त्री, पण्डित रीतेशजी शास्त्री, श्री शांतिलालजी सेठ, पण्डित आकाशजी शास्त्री, पण्डित संदीपजी शास्त्री आदि महानुभाव मंचासीन थे।

इस अवसर पर 12 विद्यार्थियों को शपथग्रहण पूर्वक न्यायशास्त्री की उपाधि से सम्मानित करते हुये कुलाधिपति डॉ. संजीवजी गोधा ने अपना मार्मिक उद्बोधन दिया।

कार्यक्रम में अन्तिम वर्ष के विद्यार्थियों ने ट्रस्ट सभी अध्यापकगणों का आभार व्यक्त किया एवं भविष्य में तत्त्वप्रचार में पूरा सहयोग देने की भावना व्यक्त की।

इस अवसर पर श्री महिपालजी ज्ञायक के अध्यक्षीय उद्बोधन के अतिरिक्त श्री शांतिलालजी, पण्डित जगदीशजी, पण्डित संजयजी, पण्डित रीतेशजी एवं श्रीमती प्रेक्षा जैन ने भी अपना उद्बोधन सभी विद्यार्थियों को दिया। कार्यक्रम का संचालन पण्डित प्रवीणजी शास्त्री ने किया।

वेदी प्रतिष्ठा महोत्सव संपन्न

सिंगोड़ी (म.प्र.) : यहाँ श्री 1008 पार्श्वनाथ दिगम्बर जिनबिम्ब वेदी प्रतिष्ठा महोत्सव दिनांक 18 व 19 अप्रैल को उत्साहपूर्वक संपन्न हुआ।

इस अवसर पर डॉ. उत्तमचंदजी सिवनी, ब्र. सुनीलजी शिवपुरी, पण्डित ऋषभजी छिन्दवाड़ा, पण्डित विवेकजी छिन्दवाड़ा सजल, पण्डित जितेन्द्रजी आदि विद्वानों के प्रवचनों का लाभ मिला।

विधि–विधान के समस्त कार्य ब्र.जतीशचंदजी शास्त्री दिल्ली, पण्डित सुबोधजी शाहगढ, पण्डित रमेशजी ज्ञायक द्वारा संपन्न हुये।

हार्दिक बधाई !

जयपुर (राज) : श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धांत महाविद्यालय के स्नातक पण्डित संभवजी शास्त्री पुत्र श्री शीतलचंदजी जैन नैनधरा (म.प्र.) का केन्द्रीय विद्यालय में टी.जी.टी. संस्कृत अध्यापक के पद पर चयन हुआ है। वर्तमान में मध्यप्रदेश में शासकीय शिक्षक हैं। आप राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान जयपुर से 'आचार्य शुभचन्द्र विरचिते ज्ञानार्णवे प्ररूपितानां पंचमहाव्रतानां समीक्षात्मकमध्ययनम्' विषय पर पी.एच.डी. कर रहे हैं।

टोडरमल महाविद्यालय एवं वीतराग–विज्ञान परिवार की ओर से हार्दिक बधाई !

दृष्टि का विषय

11 तृतीय प्रवचन –डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे...)

हमारे टोडरमल महाविद्यालय में जितने भी विद्यार्थी हैं, उनमें जिन विद्यार्थियों के गले अच्छे हैं, उनमें से अधिकांश को गहरा तत्त्वज्ञान नहीं है। जिन विद्यार्थियों के गले अच्छे नहीं है, वे लगभग सभी उच्चकोटि के विद्वान हैं। इसप्रकार जिन विद्यार्थियों का गला अच्छा होता है, वे अपना समय विधान आदि में व्यतीत करते हैं और अध्ययन में उपयोग को पूर्णतः नहीं लगा पाते हैं।

इसप्रकार जो अनेक विकृतियाँ पैदा हुई हैं, वे सब रुपए–पैसे के कारण ही उत्पन्न हुई हैं; क्योंकि लोगों की दृष्टि रुपए–पैसे नामक द्रव्य पर ही है। उनकी दृष्टि उस वास्तविक आत्मद्रव्य पर नहीं है, जिस पर दृष्टि करने से हमारा कल्याण होगा।

प्रत्येक वस्तु, द्रव्य–क्षेत्र–काल व भावमय होती है। वस्तु के इन चार पक्षों में द्रव्य भी एक पक्ष है, जो कि सामान्य–विशेषात्मक होता है। इस सामान्य–विशेषात्मक पक्ष को भी द्रव्य कहते हैं और मूलवस्तु को भी द्रव्य कहते हैं।

मूलवस्तु से तात्पर्य यह है, जिसमें सामान्य–विशेष, एकानेक, नित्यानित्य और भेदाभेद ये आठ चीजें शामिल हैं।

तीसरा द्रव्य ह्न सामान्य, एक, नित्य और अभेद – इन चारों के समूह का नाम है; यही तीसरा द्रव्य द्रव्यदृष्टि का विषय है और इसमें पर्याय शामिल नहीं है।

यह एक ऐसा विषय है, जिसे आज तक समझने की कोशिश ही नहीं की गई। ऐसा नहीं है कि यह मैं अभी कह रहा हूँ या लिख रहा हूँ; अपितु इसी विषय को वीतराग–विज्ञान के सम्पादकीय के रूप में १९९१ में लिख चुका हूँ। यह विषय–वस्तु सभी के पास पिछले अनेक वर्षों से विद्यमान है, फिर भी ऐसे लोगों की संख्या कम नहीं है, जो इसे नहीं समझते हैं। इसे नयचक्र में 'द्रव्यार्थिक–पर्यायार्थिकनय' वाले प्रकरण के अन्तर्गत भी लिखा जा चुका है।

आज कोई इस विषय को पढ़ना ही नहीं चाहता है, यदि यह कह दो कि यह विषय नयचक्र में लिखा है तो लोग नयचक्र की ही छुट्टी कर देना चाहते हैं। कहते हैं कि उसे पढ़ने की जरूरत नहीं है।

कोई अपेक्षा की छुट्टी कर देते हैं।

कोई न्याय–व्याकरण पढ़ना पसन्द ही नहीं करते हैं।

जबकि इस अपेक्षा के बिना, नयों के बिना तो वस्तु का स्वरूप समझा ही नहीं जा सकता है।

इसी संबंध में 'समयसार अनुशीलन' का निम्न कथन दृष्टव्य है –

''इसप्रकार वस्तु के **१. सामान्य–विशेष –** ये दो रूप द्रव्य की अपेक्षा हैं। **२. भेद और अभेद –** ये दो रूप क्षेत्र की अपेक्षा हैं। **३. नित्य और अनित्य –** ये दो रूप काल की अपेक्षा हैं। **४. एक और अनेक ह्न** ये दो रूप भाव की अपेक्षा हैं।

जिसप्रकार १. गुणों का अभेद द्रव्यार्थिकनय का विषय है और गुणभेद पर्यायार्थिकनय का। २. प्रदेशों का अभेद द्रव्यार्थिकनय का विषय है। प्रदेशभेद पर्यायार्थिकनय का, ३. द्रव्य का अभेद (सामान्य) द्रव्यार्थिकनय का विषय है और द्रव्यभेद (विशेष) पर्यायार्थिकनय का। उसीप्रकार ४. काल (पर्यायों) का अभेद द्रव्यार्थिकनय का विषय है और कालभेद (पर्यायें) पर्यायार्थिकनय का विषय बनता है।

यहाँ जो–जो पर्यायार्थिकनय के विषय हैं, उन सभी की पर्याय संज्ञा है और जो–जो द्रव्यार्थिकनय के विषय हैं, उन सभी की द्रव्य संज्ञा है।''

लोग कहते हैं कि जैसे गुण–भेद को निकाल दिया है और गुणों को रख लिया है, वैसे ही पर्यायों का भेद निकाल दो और पर्याय को रख लो। तो मैं कहता हूँ कि अरे भाई ! **उस पर्याय का मूल नाम काल है। उस काल के भेद को ही दृष्टि के विषय में से निकाला है और काल के अभेद को दृष्टि के विषय में रखा है। नित्यता काल का अभेद है, उसे दृष्टि के विषय में से नहीं निकाला है।**

इस संबंध में लोग गलत समझते हैं कि गुण और प्रदेशों के साथ पक्षपात किया है; क्योंकि गुणभेद और प्रदेशभेद तो सम्मिलित नहीं किए, लेकिन गुणों और प्रदेशों को रखा है, जबकि पर्याय को पूरी तरह से बाहर निकाल दिया है।

जिसप्रकार द्रव्य का भेद निकाला है और द्रव्य का अभेद सम्मिलित किया है, क्षेत्र का भेद निकाला है और क्षेत्र का अभेद सम्मिलित किया है, गुण का भेद निकाला है और गुण का अभेद सम्मिलित किया है, उसीप्रकार

काल का भेद निकाला है, लेकिन काल का अभेद दृष्टि के विषय में सम्मिलित किया है।

काल का भेद, प्रदेश का भेद, गुण का भेद और द्रव्य का भेद – इन चारों का नाम पर्याय है, मात्र काल के भेद का नाम पर्याय नहीं है।

लोगों ने मात्र पर्याय के नाम पर, काल का भेद तो दृष्टि के विषय में से निकाल दिया, बाकी तीन को सम्मिलित कर लिया और दृष्टि के विषय में काल का अभेद सम्मिलित करना था तो उस काल के अभेद को भी निकाल दिया और वे समझने लगे कि हमने पर्यायों से भी पार, पर्यायों से भिन्न दृष्टि का विषय पा लिया है; पर वे बड़े धोखे में हैं।

'पर्याय' में काल का अभेद शामिल नहीं है और प्रदेश का भेद, गुण का भेद, द्रव्य का भेद और काल का भेद – ये चारों भेद पर्याय में शामिल हैं। यही पर्याय का वास्तविक अर्थ है।

चौथा प्रवचन

''दृष्टि के विषय में पर्याय शामिल हैं या नहीं'' ह्न इस प्रश्न का उत्तर समयसार परमागम की छठवीं–सातवीं गाथा के आधार पर चल रहा है।

वस्तु के सामान्य और विशेष ह्न ये दो रूप द्रव्य की अपेक्षा से हैं, भेद और अभेद ह्न ये दो रूप क्षेत्र की अपेक्षा से हैं, नित्य और अनित्य ह्न ये दो रूप काल की अपेक्षा से हैं और एक और अनेक ह्न ये दो रूप भाव की अपेक्षा से हैं।

जिसप्रकार गुणों का अभेद द्रव्यार्थिकनय का विषय है और गुणभेद पर्यायार्थिकनय का; प्रदेशों का अभेद (अनुस्यूति से रचित एक वास्तु) द्रव्यार्थिकनय का विषय है और प्रदेशभेद पर्यायार्थिकनय का; द्रव्य का अभेद (सामान्य) द्रव्यार्थिकनय का विषय है और द्रव्यभेद (विशेष) पर्यायार्थिकनय का; उसीप्रकार काल (पर्यायों) का अभेद (अनुस्यूति से रचित प्रवाह) द्रव्यार्थिकनय का विषय होता है और कालभेद (पर्यायें) पर्यायार्थिकनय का विषय बनता है।

द्रव्यार्थिकनय का विषय ही, दृष्टि का विषय है; क्योंकि द्रव्यार्थिक नय का विषय अभेद है और अभेद, निर्विकल्पता का जनक है।

पर्यायार्थिकनय का विषय भेद, विकल्प का जनक होने से दृष्टि का विषय नहीं हो सकता।

'प्रवचनसार' में जो ४७ नय बताये हैं, उनमें विकल्पनय और अविकल्पनय भी है। वहाँ भी विकल्पनय का अर्थ भेद और अविकल्पनय का अर्थ अभेद ही है।

एक बात समझने की और भी आवश्यक है कि **नित्यता और अनित्यता में नित्यता तो द्रव्यार्थिकनय का विषय है और अनित्यता पर्यायार्थिकनय का विषय है। लेकिन आत्मा में जो नित्यत्व और अनित्यत्व नाम के धर्म हैं; वे दोनों ही गुण हैं, धर्म हैं; पर्याय नहीं।**

अर्थात् सर्वज्ञता, पर्याय है और सर्वज्ञत्व नाम की शक्ति, गुण/धर्म है। सर्वदर्शित्व पर्याय है और सर्वदर्शित्व नाम की शक्ति, गुण/धर्म है; तथापि लोग सर्वज्ञता के साथ सर्वज्ञत्व शक्ति को भी सर्वज्ञ पर्याय जैसा ही दृष्टि के विषय से बाहर मान लेते हैं। चूँकि सर्वज्ञता पर्याय है और पर्याय दृष्टि के विषय में नहीं आती, इसमें सर्वज्ञत्व शक्ति थोड़े ही दृष्टि के विषय में से निकल जावेगी; क्योंकि सर्वज्ञत्वशक्ति तो आत्मा का गुण है और गुणों का अभेद द्रव्यार्थिकनय के विषय में शामिल है।

ध्यान रहे, उसमें समस्त गुण, समस्त धर्म, समस्त शक्तियाँ और समस्त स्वभाव शामिल हैं; क्योंकि ये सभी गुण के ही रूपान्तर हैं। (क्रमशः)

आगामी कार्यक्रम ...

सम्यक्त्व-योग आदि मार्गणा शिविर

देवलाली–नासिक (महा.) में दिनांक 12 से 16 जून 2015 तक करणानुयोग शिविर पुनः आयोजित किया जा रहा है। इस अवसर पर डॉ. उज्ज्वला शहा द्वारा प्रतिदिन 6–6 घंटे कक्षाओं का लाभ मिलेगा। आपके आने की पूर्व सूचना देवलाली/मुम्बई ऑफिस में अवश्य दें, ताकि आपकी समुचित व्यवस्था की जा सके। आवास व भोजन की व्यवस्था निःशुल्क रहेगी। सभी साधर्मीजन 'सम्यग्ज्ञानचंद्रिका जीवकाण्ड भाग 1 व 2' ग्रंथ अपने साथ लावें। ये शास्त्र देवलाली में सशुल्क उपलब्ध होंगे।

संपर्क सूत्र – वीतराग वाणी प्रकाशक, 157/9, निर्मला निवास, सायन (पूर्व), मुम्बई–400022, फोन – 022–24073581; पूज्य कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट, कहान नगर, लाम रोड, देवलाली, जिला–नासिक, 422401 (महा.), फोन – 0253–2491044

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो – वीडियो, प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें–
वेबसाईट – www.vitragvani.com
संपर्क सूत्र–श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई
Ph.: 022-26130820, 26104912, E-Mail - info@vitragvani.com

2 मई 2015, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 JaipurCity / 224 / 2015-17

बण्डा में शिविर संपन्न

बण्डा (म.प्र.) : यहाँ श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन स्वाध्याय मंदिर बण्डा के तत्त्वावधान में प्रतिवर्ष पाँच शिविरों का आयोजन पिछले पाँच वर्षों से किया जा रहा है।

इसी क्रम में इस वर्ष प्रथम शिविर दिनांक 2 से 15 अप्रैल तक संपन्न हुआ। शिविर का उद्घाटन दलपतपुर मुमुक्षु मण्डल द्वारा किया गया। दिनांक 15 अप्रैल को प्रथम शिविर का समापन एवं द्वितीय शिविर का उद्घाटन किया गया।

इस अवसर पर पण्डित अरुणजी मोदी, पण्डित समकितजी मोदी, पण्डित अंकितजी शास्त्री, पण्डित अरविन्दजी शास्त्री, पण्डित मयंकजी शास्त्री, पण्डित सुलभजी मंगलार्थी, पण्डित शुभमजी शास्त्री आदि विद्वानों के प्रवचनों व कक्षाओं का लाभ मिला।

शाहगढ, हीरापुर, अमरमऊ, दलपतपुर, सागर आदि स्थानों से लगभग 300 साधर्मियों ने पधारकर प्रवचनों व कक्षाओं का लाभ लिया। कार्यक्रम के संयोजक पण्डित राहुलजी शास्त्री थे।

पंचपरमेष्ठी विधान संपन्न

जयपुर (राज) : यहाँ अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन जयपुर महानगर के तत्त्वावधान में मासिक पूजन की शृंखला में दिनांक 19 अप्रैल को आमेर स्थित कीर्ति स्तम्भ की नसियां में पंचपरमेष्ठी विधान का आयोजन किया गया। विधान के आयोजनकर्त्ता डॉ. श्रीयांसजी सिंघई जयपुर थे।

इस अवसर पर फैडरेशन के लगभग 200 सदस्य उपस्थित थे। विधान के उपरांत पण्डित शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल एवं पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील के विशेष उद्बोधन प्राप्त हुये एवं बच्चों के लिये सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया।

श्री कुन्दकुन्द कहान दि. जैन तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट, मुम्बई द्वारा

ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन जयपुर में

38वाँ आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर

(रविवार, दिनांक 2 अगस्त से मंगलवार 11 अगस्त, 2015 तक)

शिविर में जयपुर आने हेतु अपने टिकिट शीघ्र करा लेवें। कृपया आवास आदि की समुचित व्यवस्था हेतु अपने पधारने की पूर्व सूचना जयपुर कार्यालय को अवश्य भेजें।

शिविर में पधारने हेतु आप सभी सादर आमंत्रित हैं।

चलो मेरठ ! चलो मेरठ !! चलो मेरठ !!! चलो मेरठ !!!! चलो मेरठ

श्री वीतराग विज्ञान आध्यात्मिक शिक्षण और प्रशिक्षण शिविर

दिनांक 24 मई से 10 जून 2015

प्रशिक्षण पाइये : अपनों को पढाइये

प्रशिक्षण पाइये : बच्चों को पढाइये

आप भी आइये : औरों को भी लाइये

यदि अभी नहीं तो कब ?

क्या आप चाहते हैं कि आपके बच्चे भी आपके ही समान संस्कारी और धर्मात्मा बनें, शाकाहारी रहें, व्यसन रहित, सात्विक और गौरवशाली जीवन जीयें और कुसंगति से बचें ?

मात्र 18 दिनों में प्रशिक्षण प्राप्त करके अपने नगर में वीतराग-विज्ञान पाठशाला का संचालन कीजिये, बच्चों में धार्मिक संस्कारों का सिंचन कीजिये, उन्हें जैनधर्म का प्राथमिक ज्ञान दीजिये। यह उनके जीवन को सात्विक और वैभवशाली बनायेगा, उन्हें कुसंगति और बुरी आदतों से दूर रखेगा। (आवास एवं भोजन सम्पूर्णत: नि:शुल्क)

शोक समाचार

आगरा (उ.प्र.) निवासी प्रसिद्ध समाजसेवी व उद्योगपति श्री प्रदीपकुमारजी जैन (पी.एन.सी.) की माताजी **श्रीमती प्रेमवतीदेवी जैन** का दिनांक 23 मार्च को देहावसान हो गया। आपकी स्मृति में जैनपथप्रदर्शक हेतु 1100/- रुपये प्राप्त हुये।

दिवंगत आत्मा चतुर्गति के दु:खों से छूटकर शीघ्र ही अनंत अतीन्द्रिय आनंद को प्राप्त हो - यही मंगल भावना है।

प्रकाशन तिथि : 28 अप्रैल 2015

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
सह-सम्पादक : **डॉ.संजीवकुमार गोधा**, एम.ए.द्वय, नेट, एम.फिल (जैनदर्शन), पीएच.डी. एवं **पण्डित परमात्मप्रकाश भारिल्ल**
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-४, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
E-Mail : ptstjaipur@yahoo.com **फैक्स :** (0141) 2704127